कृषि

भूमि की उत्पादन क्षमता और सजीव खेती

डॉ.प्रीति जोशी

भारत परम्परा से ही कृषि प्रधान देश रहा है। किसान अपने श्रम, अनुभव और सूझबूझ के आधार पर अपने परिवार व देश की अनाज सम्बंधी आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम रहा है। लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कृषि और कृषक दोनों की स्थिति विचारणीय है। किसान के लिए खेती के ज़रिए अपना पेट भरना मुश्किल हो गया है। हरित क्रांति ने भले ही अनाज का उत्पादन बढ़ा दिया हो, लेकिन किसान पर आर्थिक बोझ कम होने की बजाए बढ़ा ही है। साथ ही मिट्टी की उत्पादन क्षमता भी कम होती जा रही है।

आज खेती स्वावलम्बी न होकर बाज़ार व्यवस्था पर ज़्यादा आधारित हो गई है; बीज से लेकर फसल काटने और बेचने तक किसान का सारा पैसा बाज़ार में गुम होता जाता है। आधुनिकीकरण के नाम पर खेती का व्यापारीकरण हो रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य जीवन पोषण के लिए अनाज उगाना कम व उद्योगों के लिए कच्चा माल उगाना ज़्यादा है। खेती छोटे किसानों के हाथ से छूट कर बड़े किसानों और उद्योगपतियों की सम्पत्ति बनती जा रही है। आज कृषि और कृषक दोनों की परिभाषाएं बदल गई हैं।

इस स्थिति पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है। हम अपनी भविष्य की पीढ़ी को क्या देने जा रहे हैं! अनुपजाऊ भूमि? कृषि के नाम पर बड़े किसानों की गुलामी अथवा शहरों में रोज़गार तलाश करने की अंधी दौड़?

अगर हमें अपनी परम्परागत स्थाई कृषि को पुनर्जीवित करना है तो मिट्टी को, प्रकृति को और प्राकृतिक चक्रों को समझना अत्यन्त ज़रूरी है।

मिट्टी क्या है?

मिट्टी एक जटिल प्राकृतिक एवं जीवित संरचना है। यह हवा, पानी और सूर्य के प्रकाश के प्रभाव से चट्टानों के टूटने से बनती है, जिसमें असंख्य सूक्ष्मजीव पलते हैं। अनुकूल और प्रतिकूल दोनों वातावरण में ये सूक्ष्मजीव निरंतर क्रियाशील रहते हैं। सूक्ष्म जीवाणुओं की संरचनात्मक तथा विघटनात्मक प्रक्रियाओं द्वारा खनिज पदार्थों और कार्बनिक पदार्थों का विघटन होता रहता है

मिट्टी के घटक

मिट्टी मुख्यत: पांच घटकों की बनी होती है।

1. खनिज पदार्थ 2. पानी 3. हवा 4. कार्बनिक पदार्थ 5. सूक्ष्म जीवाणु

अलग-अलग स्थानों पर इनकी मात्रा के अनुपात बदलते रहते हैं। इसका प्रभाव मिट्टी के प्रकार पर पड़ता है। मिट्टी में खनिज पदार्थों का अनुपात तो फिर भी स्थिर रहता है, लेकिन हवा, पानी और सूक्ष्मजैविकीय प्रक्रियाएं वातावरण के अनुसार बदलती रहती हैं। मिट्टी और पानी मिलकर ज़मीन का लगभग आधा भाग घेरते हैं। कार्बनिक पदार्थ 3-6 प्रतिशत भाग और सूक्ष्मजीवाणु सिर्फ 1 प्रतिशत भाग पर कब्जा जमाए हैं। लेकिन यह 1 प्रतिशत मिट्टी का सबसे महत्वपूर्ण घटक है।

मिट्टी व पेड़-पौधों का सम्बंध

मिट्टी वह प्राकृतिक माध्यम है जिस पर पेड़-पौधे विकसित होते हैं। पौधे का विकास 6 मुख्य घटकों द्वारा नियमित होता है।

1. प्रकाश 2. भौतिक आधार 3. गर्मी
4. पानी 5. हवा 6. अन्न द्रव्य

मिट्टी में खनिज पदार्थों का अनुपात तो फिर भी स्थिर रहता है लेकिन हवा, पानी और सूक्ष्मजैविकीय प्रक्रियाएं वातावरण के अनुसार बदलती रहती हैं। मिट्टी और पानी मिलकर ज़मीन का लगभग आधा भाग घेरते हैं। कार्बनिक पदार्थ 3-6 प्रतिशत भाग और सूक्ष्मजीवाणु सिर्फ 1 प्रतिशत भाग पर कब्जा जमाए हैं। लेकिन यह 1 प्रतिशत मिट्टी का सबसे महत्वपूर्ण घटक है।

सूक्ष्मजीव-जन्तु चार्ट

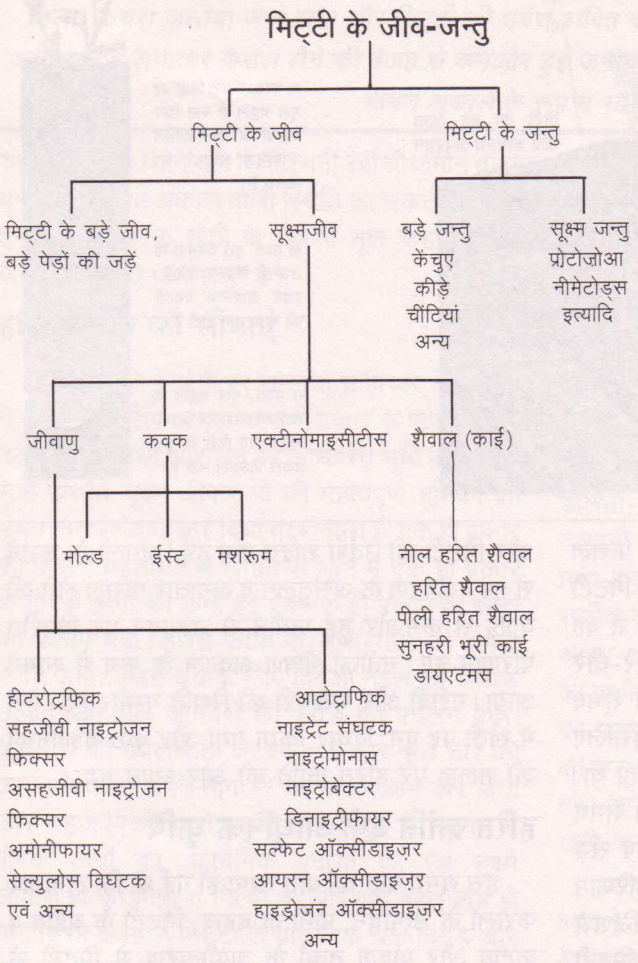

वास्तव में पौधे प्राथमिक रूप से अपना पोषण वातावरण से प्राप्त करते हैं। वे अपने पोषण का कुल 95 प्रतिशत भाग वातावरण से व सिर्फ 5 प्रतिशत भाग मिट्टी से लेते हैं। वातावरण से प्राप्त पोषण में ऑक्सीजन 42 प्रतिशत, कार्बन 45 प्रतिशत व हाइड्रोजन 6 प्रतिशत होती है। प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में पानी का विघटन होता है जिससे हाइड्रोजन का उपयोग शर्करा बनने में होता है व ऑक्सीजन का उपयोग पौधों की श्वसन क्रिया में होता है। इस क्रिया द्वारा पौधे अपना भोजन यानी शर्करा, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, लिपिड, अमीनो एसीड इत्यादि बनाते हैं।

सामान्यतः हरे पौधों में 80 प्रतिशत पानी, 18 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ व 2 प्रतिशत खनिज पदार्थ होते हैं। कार्बनिक पदार्थों में नाइट्रोजन युक्त व नाइट्रोजन रहित पदार्थ होते हैं। सभी कार्बनिक पदार्थों का विघटन एक जटिल सूक्ष्म जैविकीय प्रक्रिया है जो अलग-अलग प्रकार के सूक्ष्म जीवाणु व जीव-जन्तुओं द्वारा नियंत्रित होती है। (सूक्ष्म जीवजन्तु चार्ट)

सभी जीवजन्तु वनस्पति व प्राणियों के जीवन चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संघटन, विघटन एवं परिवर्तन की विभिन्न प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं। इन सब प्रक्रियाओं में कोई एक जीव नहीं वरन जीव जन्तुओं के अलग-अलग समूह, अलग-अलग अवसरों में, सामूहिक रूप से क्रियाशील होते हैं। भूमि की उपजाऊ शक्ति व पौधे के विकास से सीधा सम्बंध रखने वाली महत्वपूर्ण प्रक्रियाएं हैं:

कार्बनिक पदार्थों का विघटन, मिट्टी में हयूमस बनना, जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण, पोषक तत्वों का सूक्ष्म जैविकीय परिवर्तन, फॉस्फोरस चक्र, सल्फर चक्र इत्यादि।

प्रकृति हर जीव जन्तु का पालन करने हेतु पूर्णतः सम्पन्न है। उसे बाहर के किसी भी प्रकार के सहयोग अथवा हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। हज़ारों हज़ार वर्ष से जीवित हमारे जंगल इस बात का साक्षात प्रमाण हैं। हमारी आदि काल की कृषि की उत्पादकता व स्वनिर्भरता भी इस बात को साबित करते हैं कि यदि प्रकृति के सभी संसाधनों का भली भांति उपयोग करके प्रकृति के नियमों के अनुसार खेती की जाए तो वह स्वावलम्बी एवं चिरजीवी होती है।

पारंपरिक खेती

आदि काल में मानव पूर्णतः वनोजन पर आश्रित था। फिर उसने जंगलों को काटकर खेती आरम्भ की। किन्तु वह एक ज़मीन पर एक ही वर्ष फसल लेता, दूसरे वर्ष

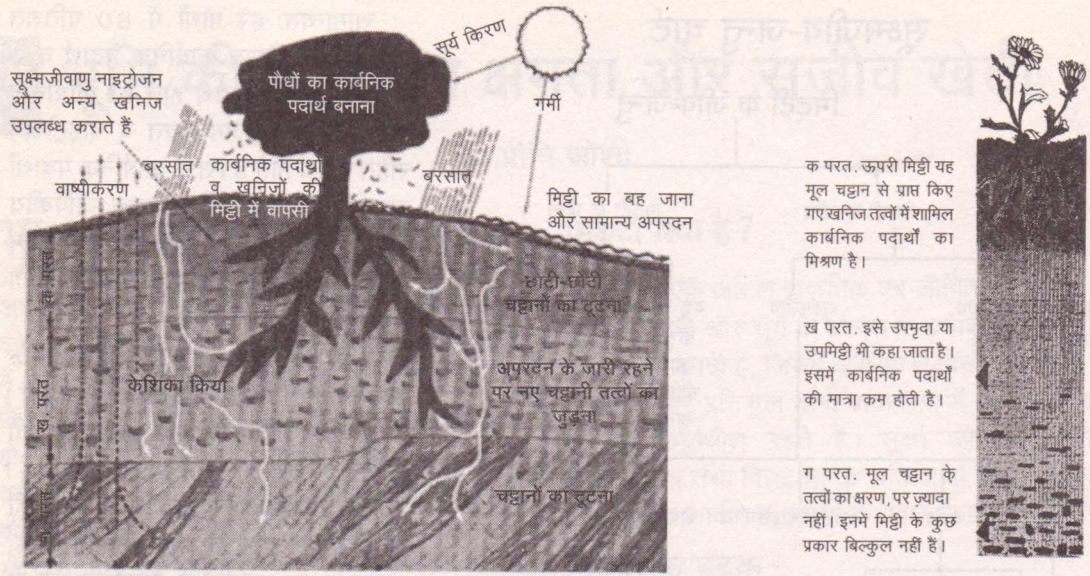

आगे बढ़कर दूसरी ज़मीन साफ करके उस पर फसल लेता था। इसे चलित कृषि कहते थे। जंगलों की मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की विपुलता होने की वजह से वह उर्वर थी। इसमें भरपूर फसल होती थी। धीरे-धीरे जनसंख्या बढ़ी तो बदल-बदलकर खेती करना संभव नहीं हो पाया। चूंकि खेती वर्षा पर आधारित थी इसलिए एक वर्ष में एक ही बार फसल लेना सम्भव हो पाता था। वर्ष में 6-8 महीने ज़मीन खाली रहती थी। इस समय फसलों द्वारा उत्पन्न कचरा खेत पर अपने आप सड़ जाता और उसमें कार्बनिक पदार्थों का आवश्यक परिणाम बना रहता था। किसान जानवर भी पालते थे जिससे उनका मलमूत्र भी ज़मीन में पड़ा रहता। इस सबसे मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और जीवाणु शक्ति जीवित रहती थी। उस समय की पैदावार आज की भरपूर रासायनिक खाद वाली ज़मीन के उत्पादन से कहीं अधिक होती।

समय के साथ जनसंख्या तेज़ी से बढ़ती गई, अतः अनाज की मांग भी बढ़ी। फलतः खेती के विकास की बात सोची गई। सिंचाई के साधन विकसित किए गए। कुएं, नहर, नालियां बनाई गईं ताकि वर्षा के अलावा भी फसल ली जा सके।

इस प्रकार जब वर्ष में 2-3 बार फसले ली जाने लगी, तब कार्बनिक पदार्थों के प्राकृतिक विघटन हेतु ज़मीन को समय नहीं मिला, कचरा जलाया जाने लगा और मिट्टी की उर्वरा शक्ति कम हुई। जंगलों के कटने से हुए पर्यावरण के असंतुलन व लगातार फसल लेने की वजह से कमज़ोर हुई ज़मीन से उत्पादन पर विपरीत परिणाम हुए। नतीजा भीषण अकाल के रूप में सामने आया। गरीबी और भुखमरी की स्थिति गम्भीर हुई। ऐसे में खेती पर पुनः विचार किया गया और कुछ वैज्ञानिकों की सलाह पर हरित क्रांति की ओर ध्यान गया।

हरित क्रांति उर्फ आधुनिक कृषि

इस समय तक यह बात स्पष्ट हो गई थी कि लगातार फसलों के उत्पादन, पानी के बहाव, मिट्टी के बहाव व कटाव और पोषक तत्वों के वाष्पीकरण से मिट्टी से पोषक तत्व निरन्तर घट रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार फसलों द्वारा प्रति वर्ष औसतन 42.7 लाख टन नाइट्रोजन 21.3 लाख टन फॉस्फेट, 74.2 लाख टन पोटाश एवं 48.8 लाख टन कैल्शियम निकाला जाता है। इन तमाम पोषक तत्वों की भरपाई के लिए कृत्रिम रूप से इन्हें ज़मीन में रासायनिक खाद के रूप में डाला गया। साथ ही कीटनाशक दवाइयों, संकर बीजों, सिंचाई एवं ज़मीन जुताई के आधुनिक साधनों का भी उपयोग बढ़ाया गया।

हरित क्रांति में फसलों का उत्पादन जितनी तेज़ी से बढ़ा, 30-40 वर्षों बाद यह उतनी ही तेज़ी से घटता

जब वर्ष में 2-3 बार फसलें ली जाने लगीं, तब कार्बनिक पदार्थों के प्राकृतिक विघटन हेतु ज़मीन को समय नहीं मिला, कचरा जलाया जाने लगा और मिट्टी की उर्वरा शक्ति कम हुई। जंगलों के कटने से हुए पर्यावरण के असंतुलन व लगातार फसल लेने की वजह से कमज़ोर हुई ज़मीन से उत्पादन पर विपरीत परिणाम हुए। नतीजा भीषण अकाल के रूप में सामने आया।

चला जा रहा है। यदि यही स्थिति बनी रही तो ज़मीन बंजर बन जाएगी तथा अकाल वाली स्थिति आ सकती है। अतः इस पूरे आधुनिक खेती के तंत्र में भूल कहां हुई यह जानना अत्यन्त आवश्यक है।

हरित क्रांति की सीमाएं

हरित क्रांति में खेती पर समग्रता से विचार नहीं किया गया। पौधे के लिए आवश्यक सभी प्रकार के पोषक तत्वों, कार्बनिक पदार्थों और उन पर आधारित भूमि की सजीव सृष्टि अर्थात सूक्ष्म जीवाणुओं की महत्वपूर्ण भूमिका को पूर्णतः नज़रअंदाज़ कर दिया गया। साथ ही एक ही प्रकार की फसल बहुतायत में लगाने से भूमि में एक ही प्रकार के पोषक तत्वों की कमी हुई एवं एक ही प्रकार के कीटों का प्रकोप बढ़ा। हरित क्रांति के साथ-साथ जो सफेद क्रांति आई, उसमें दूध के लिए विदेशी नस्ल की अधिक उत्पादकता वाले जानवरों की डेयरी का प्रचलन बढ़ा। कुछ दूध की उपलब्धता की वजह से और कुछ चारे की कमी की वजह से किसानों ने पशु पालन कम कर दिया और सहज मिलने वाले पशुओं के मलमूत्र के माध्यम से पोषक तत्वों का, कार्बनिक पदार्थों का एवं सूक्ष्म जीवाणुओं का मिट्टी में मिलने का परिणाम बहुत कम हो गया। इसी वजह से मिट्टी के प्राकृतिक चक्र बिगड़े और परिणाम हमारे सामने है। बढ़ती हुई बंजर भूमि खास तौर पर पंजाब और हरियाणा में जहां रासायनिक खाद का उपयोग सबसे अधिक हुआ। रासायनिक खाद के उयपोग से मिट्टी का संतुलन ही नहीं बिगड़ा वरन पौधों के पोषक तत्वों में भी कमी आई। उनकी प्रतिरोध क्षमता कम हुई और कीटों का प्रकोप दिनोंदिन बढ़ा। अतः फसल के लिए कम होती ज़मीन और कीटों द्वारा फसल का विनाश की दोहरी मार किसान पर पड़ी।

विकल्प

इसका एक विकल्प है मिट्टी की प्रकृति के तंत्र को पुनर्जीवित, पुनर्स्थापित करना। और यह सजीव खेती द्वारा पाया जा सकता है। सजीव खेती का सबसे महत्वपूर्ण एवं आवश्यक घटक है कार्बनिक पदार्थ एवं मिट्टी की जीवाणु शक्ति। इसके लिए कृषि व जानवरों द्वारा उत्पन्न सभी प्रकार के पदार्थों का पुनः ज़मीन में जाना अनिवार्य है ताकि मिट्टी और पेड़ पौधों का प्राकृतिक सम्बंध स्थापित हो।

सजीव खेती के अनेक तरीके हैं जैसे रासायनिक खाद के स्थान पर गोबर खाद अथवा कम्पोस्ट खाद डालना; भूमि पर कचरे का आवरण करना (मल्च); दलहनी फसलों जैसे मूंग, तुअर, उड़द इत्यादि लगाना तथा इनका हरी खाद के रूप में प्रयोग करना आदि। सजीव खेती में एक ही प्रकार की फसल न लेते हुए अलग-अलग प्रकार की फसलें ली जाती हैं। इससे कीड़ों का प्रकोप कम होता है तथा एक फसल से दूसरी फसल को पोषण मिलता है। एक ही ज़मीन पर एक ही प्रकार की फसल दो बार नहीं ली जाती। कई किसानों ने प्रयोगों तथा अपने अनुभवों द्वारा प्राकृतिक खेती अथवा सजीव खेती के सफल उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।

परन्तु इस समस्या का समाधान सिर्फ खेती के तरीके बदलने से नहीं होगा वरन हमारी सोच बदलना भी आवश्यक है। सर्वप्रथम खेती का लक्ष्य सिर्फ अधिकतम उत्पादन लेना है इस धारणा को बदलना होगा। अधिकतम उत्पादन का लक्ष्य ही भूमि के शोषण पर आधारित है। कृषि का लक्ष्य चिरजीवी कृषि होना चाहिए जिसमें खेती प्रकृति व पर्यावरण के अनुकूल होती है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि खेती स्वावलम्बी हो और किसान को आत्मनिर्भर बनाए। किसान के पास जो भी संसाधन है उसका उपयोग करके ही खेती अच्छी हो ताकि बाज़ार पर उसकी निर्भरता कम हो, उसका खर्च कम हो, उसका कर्ज़ कम हो और खेती चिरजीवी बने। *(स्रोत विशेष फीचर्स)*

डॉ. प्रीति जोशी विकास मित्र संस्था कोण्डागांव, बस्तर में काम करती हैं।